

हरियाणा में फसलों व सब्जियों की खेती करने वाले किसानों की होगी बल्ले-बल्ले जापान की मदद से हरियाणा में शुरू होगा बागवानी प्रोजैक्ट

प्रदेश सरकार राज्य में बागवानी को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाने के लिए जापान के सहयोग से एक महत्वाकांक्षी योजना लागू करने जा रही है। इस सस्टेनेबल बागवानी प्रोजैक्ट पर आगामी 9 वर्षों में 2738 करोड़ रुपये खर्च होंगे, जिससे प्रदेश के 22 जिलों में 400 बागवानी कलस्टर स्थापित

- 9 वर्षों का प्रोजैक्ट, 2738 करोड़ की लागत, 22 जिलों में बनेंगे 400 कलस्टर
- अगले एक साल में योजना पर 138 करोड़ रुपए खर्च करेगी सरकार
- कोल्ड स्टोर्स के लिए सस्ती बिजली, 6.50 रुपए प्रति यूनिट होगी दर

खर्च करने का लक्ष्य रखा है। मुख्यमंत्री नायब सैनी ने घोषणा की कि इस परियोजना से फल-सब्जी उत्पादकों की आय

बागवानी मिशन के तहत कवर किया जाएगा। पहले यह योजना केवल 19 जिलों तक सीमित थी, लेकिन अब फरीदाबाद, रेवाड़ी और कैथल को भी इसमें जोड़ा गया है। इसके अलावा, 'मेरी फसल-मेरा ब्योरा' पोर्टल पर अब सभी फसलों के लिए इंटरक्रॉपिंग की सुविधा मिलेगी।

कोल्ड स्टोरेज के लिए सस्ती बिजली

बागवानी क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने कोल्ड स्टोरेज की बिजली दरों में कटौती की है। अब 20 किलोवाट से अधिक लोड वाले कोल्ड स्टोरेज को 7.50 रुपये प्रति यूनिट की बजाय 6.50 रुपये प्रति यूनिट दर पर बिजली मिलेगी। यह राहत मशरूम कम्पोस्ट, हाईटेक

हाईड्रोपोनिक्स, ऐरोपोनिक्स और एफपीओ द्वारा बनाए गए कोल्ड स्टोरेज पर भी लागू होगी। हरियाणा में फल-सब्जी उत्पादकों के लिए गन्ना में अंतरराष्ट्रीय फल व सब्जी मंडी बनाई जा रही है। इसका पहला चरण नवंबर 2025 तक पूरा होगा, जिसमें 400 दुकानें और 5 बड़े शेड होंगे। सरकार इस परियोजना पर 2600 करोड़ रुपये खर्च कर रही है।

इन योजनाओं से किसानों को सीधा लाभ मिलेगा

गुरुग्राम में हाईटेक फूल मंडी : गुरुग्राम में आधुनिक और वातानुकूलित फूल मंडी स्थापित करने की घोषणा की गई है। इसके अलावा, रेवाड़ी के मनेठी गांव में भी एक नया मार्केट यार्ड बनाया जाएगा, जिससे किसानों

को सीधा लाभ मिलेगा।

हिसार एयरपोर्ट से होगा बागवानी उत्पादों का निर्यात : हिसार में बन रहे महाराजा अग्रसेन इंटरनेशनल एयरपोर्ट में एयर कार्गो टर्मिनल स्थापित किया जाएगा, जिससे हरियाणा के बागवानी उत्पाद सीधे अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुंच सकेंगे। इसके लिए सरकार ने 5 एकड़ भूमि चिह्नित की है।

दक्षिण हरियाणा में सरसों और सूरजमुखी तेल मिल रू राज्य में सबसे बड़ी आधुनिक सरसों तेल मिल दक्षिण हरियाणा में और सबसे बड़ी सूरजमुखी तेल मिल कुरुक्षेत्र में पीपीपी मॉडल पर स्थापित की जाएगी।

सिरसा में जूस प्रोसेसिंग प्लांट : हरियाणा में किन्नू की खेती को बढ़ावा देने के लिए सिरसा में जूस प्रोसेसिंग प्लांट लगाया जाएगा। इसे हरियाणा एग्रो इंडस्ट्रीज कॉर्पोरेशन और हरियाणा डेयरी विकास सहकारी संघ मिलकर स्थापित करेंगे।



किए जाएंगे। प्रदेश सरकार ने इस बाढ़ेगी और राज्य में बागवानी क्षेत्र योजना के पहले चरण के लिए का तेजी से विस्तार होगा। अब 2025-26 में 138 करोड़ रुपये प्रदेश के सभी 22 जिलों को

हिमाचल के सेब उत्पादकों की पुकार

अमेरिका-सामान पर टैरिफ कम न करो सरकार

कृषि उत्पादों सहित अमेरिकी वस्तुओं पर टैरिफ कम करने की अमेरिकी मांग से सेब उत्पादक बेहद चिंतित हैं। उन्हें उम्मीद है कि सरकार वाशिंगटन सेब पर आयात शुल्क कम नहीं करेगी क्योंकि यह स्थानीय उपज के लिए हानिकारक होगा। वाशिंगटन सेब पर आयात शुल्क 2023 में 70 प्रतिशत से घटा कर 50 प्रतिशत कर दिया गया था। इसमें और कमी से प्रीमियम घरेलू सेब का बाजार और सिकुड़ जाएगा।

उत्पादक अच्छी गुणवत्ता वाले, नियमित आकार के वाशिंगटन सेब को राज्य में उत्पादित प्रीमियम सेब के लिए एक बड़ा खतरा मानते हैं। उन्हें डर है कि अगर आयात शुल्क 50 प्रतिशत से और कम किया गया तो भारतीय बाजार वाशिंगटन सेब से भर जाएगा और उनकी आशंका निराधार नहीं है। सरकार द्वारा आयात शुल्क 50 से बढ़ाकर 70 प्रतिशत करने से पहले 2018-19 में अमेरिका से सेब का आयात करीब 1.28 लाख मीट्रिक टन था। शुल्क में बढ़ोतरी के परिणामस्वरूप, 2022-23 तक आयात घट कर मात्र 4,486 मीट्रिक टन रह गया। मौद्रिक संदर्भ में, आयात पांच वर्षों में 145 मिलियन डॉलर से घटकर मात्र 5.27 मिलियन डॉलर रह गया। उत्पादकों के अनुसार जब से 2023 में शुल्क को वापस 50 प्रतिशत पर लाया गया है, थोड़े समय में ही आयात में लगभग 20 गुना वृद्धि हो गई है। शुल्क में किसी भी तरह की

और कमी से भारतीय बाजार में वाशिंगटन सेब के लिए द्वार खुल जाएंगे और यह बहुत कम कीमतों पर उपलब्ध होगा, लगभग प्रीमियम घरेलू सेब के समान मूल्य वर्ग



में। और यही बात स्थानीय उत्पादकों की रातों की नींद हराम कर रही है। उत्पादकों का कहना है कि वाशिंगटन सेब और स्थानीय प्रीमियम सेब का बड़े पैमाने पर उच्च आय वर्ग द्वारा उपभोग किया जाता है, जो ब्रांड के प्रति अत्यधिक जागरूक है। फल, सब्जी और फूल उत्पादक संघ के अध्यक्ष हरीश चौहान ने कहा, "अगर वाशिंगटन सेब स्थानीय प्रीमियम सेब के बराबर या उससे भी थोड़ी अधिक कीमत पर उपलब्ध हो, तो उपभोक्ता वाशिंगटन सेब को ही चुनेंगे।" उन्होंने कहा, "हमारा सेब उतना ही पौष्टिक या रसदार हो सकता

है, लेकिन वाशिंगटन सेब ब्रांड के साथ प्रतिस्पर्धा करना मुश्किल होगा क्योंकि ज्यादातर लोगों का मानना है कि आयातित उत्पाद बेहतर हैं।"

सेब उत्पादकों को पहले से ही गैर-प्रीमियम सेगमेंट में ईरानी सेब से बड़ी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। ईरानी सेब भारतीय बाजार में 50-60 रुपये की कम कीमत पर उपलब्ध है, जिससे गैर-प्रीमियम गुणवत्ता वाले सेबों को लाभकारी मूल्य मिलना बेहद मुश्किल है। स्थानीय सेब उस दर पर आयातित सेबों के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकता क्योंकि राज्य में उत्पादन की लागत काफी अधिक है, मुख्य रूप से पहाड़ी इलाकों के कारण जहां मशीनीकरण संभव नहीं है। बढ़ती इनपुट लागत, श्रम और परिवहन लागत अन्य मुद्दे

हैं जो स्थानीय सेबों को समान अवसर नहीं देते हैं। प्रोग्रेसिव ग्रोअर्स एसोसिएशन के अध्यक्ष लोकिंदर बिष्ट ने कहा, "अगर आयात शुल्क कम किया जाता है तो यह उन उत्पादकों के लिए वास्तव में निराशाजनक होगा जो गुणवत्तापूर्ण फल उत्पादन की ओर आगे बढ़ना चाहते हैं।" इसके अलावा, उत्पादकों को डर है कि अगर भारत अमेरिका के दबाव में आ जाता है तो भारत को सेब निर्यात करने वाले कई अन्य देश भी अपने उत्पाद के लिए आयात शुल्क कम करने का दबाव बनाएंगे।

संयोग से, टैरिफ कम करने की अमेरिका की मांग ऐसे समय में आई है जब उत्पादक सेब पर आयात शुल्क को 50 से बढ़ाकर 100 प्रतिशत करने की मांग कर रहे हैं। पहले से ही अनिश्चित मौसम, बढ़ती इनपुट लागत और ईरान, तुर्की आदि देशों से सस्ते आयात के कारण कठिन समय का सामना कर रहे उत्पादक सेब की खेती को टिकाऊ बनाए रखने के लिए आयात शुल्क में वृद्धि की मांग कर रहे हैं। चौहान ने कहा, "अगर शुल्क कम किया जाता है तो यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सेब से अपनी आजीविका कमाने वाले लाखों परिवारों के लिए एक बड़ा झटका होगा।" चौहान ने कहा, "वोकल फॉर लोकल जैसे नारे का कोई मतलब नहीं रह जाता अगर सरकार अपने ही लोगों की आजीविका की रक्षा करने में विफल रहती है।"

करनाल बंट - गेहूं का कोढ़

हरियाणा के करनाल शहर से सर्वप्रथम इस रोग के बारे में मालूमात वर्ष 1931 में हुई और इसी कारण यह करनाल बंट कहलाता है। यह टेलेशिया इंडिका और निवोशिया इंडिका के नाम से जाना जाता है। यह रोग भारत में हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड तथा हिमालय पर्वत की तलहटी के राज्यों में पाया जाता है। यह रोग पाकिस्तान, अफगानिस्तान, ईरान, मैक्सिको, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, नेपाल, दक्षिणी अफ्रीका में भी फैला हुआ है। यह रोग गेहूं की एस्टीवम तथा ड्यूर्म तथा ट्रिटिकेल में पाया जाता है।

“अन्नम ब्रह्म इति”

अर्थात् अन्न ही ब्रह्म है। अन्न की ना निन्दा करनी चाहिए, ना ही उपेक्षा और अवहेलना बल्कि अन्न का हमेशा संवर्धन करना चाहिए। खाद्यान्न में गेहूं प्रमुख अन्न है :

1. गेहूं भारत में ही नहीं,

प्रति हैक्टेयर क्विंटल प्राप्त किया तथा कुल 130 लाख टन कुल उत्पादन किया तथा पुनः राष्ट्रपति के हाथों 15.09.2013 को तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री भूपेन्द्र सिंह हुड्डा ने एक करोड़ रुपए का कर्मण पुरस्कार प्राप्त किया।

2. गुणवत्ता के प्रति



बल्कि विश्व में प्रमुख खाद्यान्न फसल है। भारत में अनुमानतः प्रति वर्ष 300 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में गेहूं की बुवाई होती है तथा 888 लाख मीट्रिक टन उत्पादन होता है और लगभग 10 करोड़ मीट्रिक टन उत्पादन का लक्ष्य है, जोकि शीघ्र ही प्राप्त करने के प्रयास किए जा रहे हैं। हरियाणा यद्यपि एक छोटा राज्य है, परन्तु प्रमुख गेहूं उत्पादक प्रांत है और औसतन 25 लाख हैक्टेयर में गेहूं की खेती की जाती है, जबकि उत्पादन लगभग 95 लाख टन होता है, परन्तु वर्ष 2010-11 में सभी राज्यों को पीछे छोड़ गेहूं में प्रति हैक्टेयर 46.24 क्विंटल उत्पादकता के साथ देश में प्रथम स्थान प्राप्त कर कर्मण पुरस्कार प्राप्त किया। साथ ही कुल उत्पादन को 116 लाख टन तक पहुंचाया है। हरियाणा का किसान नमनीय / वन्दनीय है, क्योंकि प्रति हैक्टेयर उत्पादकता का अपना रिकॉर्ड स्वयं रबी 2011-12 में तोड़ 51.81

जागरूकता : भारत सरकार के सामने जनसंख्या वृद्धि के दबाव के कारण 130 करोड़ जनता के पेट भरने का यक्ष प्रश्न है। अतः उत्पादन मात्रात्मक आधार पर किया जाता रहा है और गुणात्मक पहलू पर विचार ही नहीं होता। विगत वर्षों में भारत अन्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ा है। 888 लाख टन तक गेहूं उत्पादन हो रहा है और लक्ष्य 10 करोड़ टन शीघ्र प्राप्त कर लेंगे। अतः गुणात्मक आधार पर विचार अवश्य होगा। भारत में गेहूं उत्पादन बढ़ने तथा विपणन (मार्केटिंग) का वैश्वीकरण होने, तकनीकी ज्ञान वृद्धि, सरकार की उदार नीति, गुणात्मकता के प्रति आई चेतना, कानूनों की प्रतिबद्धता के कारण गुणात्मक पहलुओं पर विचार करना और क्रियान्वयन करना आवश्यक हो गया है। गेहूं में यद्यपि अनेकों बीमारियां जैसे खुली कंगियारी (Loose smut - Ustilago segetum), पीली रौली (Yellow

rust - puccinia streciformis), काली रौली (Black rust - P. graminis tritici), भूरी रौली, पताका कंगियारी (Flag smut - Urocystis agropyri), ममणी / गेगला (Ear cockel - Anguina tritici), टुन्डू (Corynebacterium michiganense) लगती है। परन्तु

आर. बी. सिंह, एरिया मैनेजर (सेवा निवृत्त),
नेशनल सीड्स कार्पोरेशन 'कला निकेतन', ई-70,
गली नं.11, जवाहर नगर, हिसार (मो.94667-46625) तथा
मनोज कुमार, फील्ड ऑफिसर सीड, हिसार

करनाल बंट (Karnal Bunt - Neovossia indica) प्रमुख है। यद्यपि इस रोग से मात्रात्मक क्षति नगण्य है, परन्तु खाद्यान्न में गुणात्मक क्षति जिसके कारण उत्पादन की विपणन गुणवत्ता घटती है। साथ ही बीज की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। विगत वर्षों में हमारा गेहूं चाइना तथा कई देशों ने इस आधार पर लौटा दिया कि उसमें करनाल बंट प्रतिशत वैश्विक मानदण्ड से अधिक था। अतः सरकारें इस बारे में गम्भीर हैं और कृषकों को रोग मुक्त बीज का उत्पादन किया जाए।

3. व्याधि का उदय एवं प्रसार : हरियाणा के करनाल शहर से सर्वप्रथम इस रोग के बारे में मालूमात वर्ष 1931 में हुई और इसी कारण यह करनाल बंट कहलाता है। यह टेलेशिया इंडिका और निवोशिया इंडिका (Tilletia indica & Neovossia indica) के नाम से जाना जाता है। यह रोग भारत में हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड तथा हिमालय पर्वत की तलहटी के राज्यों में पाया जाता है। यह रोग पाकिस्तान, अफगानिस्तान, ईरान, मैक्सिको, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, नेपाल, दक्षिणी अफ्रीका में भी फैला हुआ है। यह रोग गेहूं की

वर्षा में सक्रिय होते हैं और बाल (Ear) निकलने और पुष्पन समाप्त होने के मध्य प्रभावित करते हैं। इसके स्पोरेडिया (कवक) खेत में 5 वर्ष तक जीवित रह सकते हैं।

5. लक्षण : खड़ी फसल में इस रोग के पौधों को पहचानना सरल नहीं है, क्योंकि इसमें पूरा



एवं डॉ. आर.सी. पूनिया के द्वारा वर्ष 2007-08 एवं 2010-11 के मध्य चार वर्षों के सर्वे के आधार पर रोग का प्रभाव शून्य प्रतिशत सहनशीलता से अधिक तो पाया गया, परन्तु भारतीय न्यूनतम बीज प्रमाणीकरण मानकों से कम ही पाया गया। इन चार वर्षों में एकत्र किए गए कृषकों के अनाज से लिए गए 1713 सैम्पलों में से मात्र 289 सैम्पल (16.87 प्रतिशत) ही रोग ग्रसित पाए गए। इन 289 सैम्पल में 0.05 से 0.25 प्रतिशत तक रोग का प्रभाव मिला। ये सैम्पल 10 जिलों से लिए गए, जिनमें सबसे अधिक यमुनानगर, उसके बाद करनाल तथा सबसे कम सिरसा तथा हिसार जिलों में प्रकोप पाया गया। सर्वे के सभी जिले प्रभावित थे।

7. भारत सरकार एवं करनाल बंट : कृषि विभाग भारत सरकार ने अपने पत्र दिनांक 16.07.2014 के द्वारा बीज उत्पादक संस्थाओं को गेहूं के बीज उत्पादन में प्रोपीकोनाजोल 25% ई.सी. 0.1% घोल का छिड़काव करने के आदेश दिए हैं, जिससे भारत के बाहर हमें गेहूं का बाज़ार मिल सके।

8. करनाल बंट एवं भ्रान्ति : कई बार करनाल बंट नहीं होता, परन्तु दाने की ऊपरी सतह पर तथा हाईलम (अंकुरण स्थल) पर कालापन आ जाता है। वह वास्तव में Black Point होता है, ना कि करनाल बंट। इसी प्रकार कॉमन बंट, ड्वार्फ बंट और राई बंट (Bunt of Rye) भी इसी प्रकार के लक्षणों के कारण भ्रामक स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

9. बंट एवं प्रमाणीकरण मानक : भारतीय न्यूनतम प्रमाणीकरण मानक 2013 के अनुसार खड़ी फसल के फील्ड स्टैन्डर्ड नहीं बनाए हैं, क्योंकि खेत में प्रभावित पौधों को पहचानना संभव नहीं है। अतः पुष्पन अवस्था में टिल्ट का छिड़काव करना चाहिए। बीज मानक के रूप में आधार बीजों में 0.05 प्रतिशत तथा प्रमाणित बीजों में 0.25 प्रतिशत अधिकतम (संख्या) के आधार पर बंट मान्य है। अतः बीज विधायन केन्द्रों पर बीज लेते समय विशेष ध्यान दें।

10. समेकित व्याधि
शेष पृष्ठ 6 पर



एस्टीवम तथा ड्यूर्म (T.aestivum & T.durum) तथा ट्रिटिकेल में पाया जाता है।

4. अनुकूल वातावरण : यह रोग बीज, वायु, पशु, संक्रमित औज़ार एवं भूमि जनित है। इसके टैलीयोस्पर्स ठण्डे, शीत (8 से 20 डिग्री सैल्सियस) और अधिक आर्द्रता (Humidity) एवं रिमझिम

बंट : हरियाणा राज्य के करनाल बंट नामक बीमारी की व्यापकता नहीं है, परन्तु अन्य देशों में गेहूं के निर्यात हेतु शून्य प्रतिशत सहनशीलता (Zero Percent Tolerance) से अधिक है। हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के बीज विज्ञान एवं तकनीकी विभाग के कृषि वैज्ञानिकों डॉ. एस.एस. जाखड़

गेहूं की फसल को चूहों से बचाएं



मध्य फरवरी से लेकर पूरे मार्च में चूहे गेहूं की फसल को काफी नुकसान पहुंचाते हैं। हैप्पी सीडर, सुपर सीडर या मल्विंग तकनीकों के साथ लगाए गेहूं के खेतों में चूहों की गिनती ज्यादा होने से ज्यादा नुकसान होता है। पठानकोट के कृषि अधिकारी डॉ. अमरीक सिंह का कहना है कि समय पर न रोकने से चूहे 6 से 25 प्रतिशत तक फसलों को नुकसान पहुंचा देते हैं। चूहों का नियंत्रण अन्य कीटों एवं पक्षियों से कठिन होता है। नियंत्रण के लिए ग्राम स्तर पर सामूहिक चूहा मार अभियान चलाना आवश्यक है। क्योंकि अकेले-अकेले किसान नियंत्रण करते हैं, तो चूहे भाग कर पास के खेतों में भाग जाते हैं, जिससे सार्थक नतीजे नहीं मिलते। वहीं, ज़हरीला चोगा डाल कर इन्हें रोका जा सकता है। फरवरी-मार्च में इन पर नियंत्रण जरूरी है। इसके बाद फसल के दाने उपलब्ध हो जाते हैं और चूहे ज़हरीला चोगा नहीं खाते। ज़िंक फास्फाइड या ब्रोमाडायोलोन युक्त चोगा कागज के टुकड़ों पर रख 400 ग्राम प्रति एकड़ की दर से प्रयोग कर सकते हैं। चूहे आमतौर पर खुड्डों में रहते हैं। इसलिए पिंजरा या दवाई खुड्डों के अंदर या आस-पास रखें।

फसल को चूहों से ऐसे बचाएं

ज़िंक फास्फाइड का प्रयोग : एक किलो बाजरा, गेहूं, ज्वार का दलिया या इनका मिश्रण लेकर इसमें 20 ग्राम तेल डालें, हो सके तो मूंगफली का तेल और 25 ग्राम ज़िंक फास्फाइड डाल कर अच्छी तरह मिला लें। पुड़ियां बना कर प्रभावित जगह पर रखें।

ब्रोमाडायोलोन का प्रयोग : 20 ग्राम ब्रोमाडायोलोन 0.005 प्रतिशत पाऊंडर, 20 ग्राम ब्राउन शूगर और 20 ग्राम तेल को एक किलो अनाज के दलिया में मिला कर पूरे खेत में जगह-जगह रख दें।

रैकुमिन का प्रयोग : अनाज के एक किलो दलिया में 50 ग्राम रैकुमिन 0.0375 प्रतिशत पाऊंडर, 20 ग्राम मूंगफली या सूरजमुखी का तेल और 20 ग्राम ब्राउन शूगर मिलाएं और खेत में रख दें।

ज़हरीला चोगा बनाते समय रखें ये सावधानियां

कीटनाशक बहुत ही ज़हरीले होते हैं, इसलिए इनका प्रयोग बहुत सावधानी से करना चाहिए।

- चूहेमार दवाएं और ज़हरीला चोगा पालतू जानवरों और बच्चों की पहुंच से दूर रखें।
- दवा को दस्ताने पहन कर मिलाएं। नाक, आंखों व मुंह में जाने से रोकें।
- ज़हरीला चोगा प्लास्टिक के लिफाफे में ले जाएं और उपयोग के बाद लिफाफे को मिट्टी में दबा दें।
- बचा चोगा और मरे चूहों को ज़मीन में दबाएं।
- यदि ज़िंक फास्फाइड का प्रयोग करते समय कोई दुर्घटना हो जाए, तो रोगी के गले में उंगली डाल उल्टी करवाएं और रोगी को जल्द से जल्द डॉक्टर के पास ले जाएं।

“भारत देश में गेहूं उत्पादन का प्रमुख स्थान है। गेहूं की खेती लगभग देश के सभी राज्यों में की जाती है। हम गेहूं की पैदावार को रोगरोधी किस्मों के चुनाव, संतुलित खादों व पानी के प्रयोग से बढ़ा सकते हैं। हानिकारक कीटों



तथा बीमारियों के कारण 5-10 प्रतिशत उपज की हानि होती है और बीजों की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है। इस लेख के माध्यम से हम गेहूं में होने वाले मुख्य रोग व उनकी रोकथाम के उपायों से किसानों को अवगत करवाना चाहते हैं ताकि किसान समय रहते अपनी फसल को नुकसान से बचा सकें।”

गेहूं की बीमारियां एवं रोकथाम इस प्रकार हैं

1. भूरा या पत्तों का रतुआ : पत्तियों व पत्तियों के डंठलों पर इस रोग से नारंगी रंग के गोल धब्बे हो जाते हैं, जो बाद

रोकथाम :
* रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।
* जब बीमारी कहीं-कहीं



में गर्मी बढ़ने के कारण काले हो जाते हैं। नज़र आए, तब 800 ग्राम प्रति एकड़ मैकोज़ेब को प्रति एकड़

गेहूं की फसल में होने वाली बीमारियां एवं उनका प्रबंधन

मनजीत सिंह, पूजा सांगवान एवं विनोद कुमार मलिक,
पादप रोग विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

की दर से पानी में मिलाकर पहला छिड़काव करें। 2 या 3 छिड़काव 10 से 15 दिन के अंतराल पर करें।

2. पीला या धारीदार रतुआ : पत्तों पर कतरों में पीले रंग के छोटे-छोटे धब्बे बन जाते



हैं। ये धब्बे पत्तियों के डंठलों पर भी हो जाते हैं। रोगी पत्तियां सूख जाती हैं और गर्मी बढ़ने पर धब्बों का रंग काला हो जाता है।

रोकथाम :
* रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* 200 मिलीलीटर टिल्ट प्रति एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करें।

3. खुली कांगियारी : प्रदेश के सभी भागों व सभी किस्मों में यह रोग पाया जाता है। गेहूं की बालियां काले पाऊंडर के रूप में बदल जाती हैं। रोगी पौधों में बालियां निकलने से पहले सबसे ऊपरी पत्ती पीली हो जाती है।

रोकथाम :
धूप उपचार : मई जून में

धूप वाले दिन बीज को 4 घंटे तक पानी में भिगो दें, इसके बाद पतली परत के रूप में पक्के फर्श पर फैला दें।

दवा उपचार : 2 ग्राम बाविस्टिन प्रति किलोग्राम बीज की दर से सूखा उपचार करके ही बुवाई करें।

* रोगी पौधों की बालियों को सावधानीपूर्वक निकाल कर जला दें।

4. करनाल बंट : प्रदेश में नमी वाले क्षेत्रों में यह रोग अधिक होता है। इस रोग से दानों में काले रंग का पाऊंडर बन जाता है और इससे सड़ी मछली की गंध आती है। कुछ दानों में व किन्ही-किन्ही बालियों में इस बीमारी का प्रकोप होता है।

रोकथाम :
* रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* रोगरोधी किस्मों की रोग ग्रसित खेतों में बुवाई न करें।

* 2 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीजों की दर से बीज का सूखा उपचार करें।

5. पत्तियों की कांगियारी : यह रोग शुष्क क्षेत्रों में होता है। इस रोग से पत्तों पर काली लम्बी धारियां नसों के साथ-साथ हो जाती हैं, जो बाद में फट जाती हैं और काला चूर्ण सा बन जाता है।

रोकथाम :
* रोगी पौधों को नष्ट कर दें।

* रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* 2 ग्राम वीटावैक्स या बाविस्टिन 1 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से सूखा उपचार

करके ही बुवाई करें।

6. काला सिरा रोग : इस रोग से दानों के अंकुरण वाली जगह के पास वाले स्थान गहरा भूरा व काले रंग का हो जाता है।

रोकथाम :
* 800 ग्राम मैकोज़ेब प्रति एकड़ की दर से 10-15 दिन के अंतर पर फसल पर फूल आने से पकने तक छिड़काव करें।

7. चूर्णी रोग : यह रोग नमी व सिंचित क्षेत्रों में अधिक



होता है। रोग से पत्तियों पर सफेद चूर्ण सा बन जाता है। इस रोग का अधिक प्रकोप होने के कारण बालियां भी रोग ग्रसित हो जाती हैं।

रोकथाम : * रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* 800-1000 ग्राम घुलनशील गंधक का 160-200 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

कृषि संसार

KRISHI SANSAR

मुख्य कार्यालय :
9-ए, अजीत नगर,
पटियाला-147001
(पंजाब)
मो. 98151-04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्प्लैक्स, गरुशाला रोड,
नजदीक शोरे पंजाब मार्केट,
पटियाला-147001
(पंजाब)
मो. 90410-14575

वर्ष : 01 अंक : 08
तिथि : 22-03-2025

सम्पादक
जगप्रीत सिंह

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor, Printer & Publisher JAGPREET SINGH
Printed at Drishti Printers, Dasmesh Market,
Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, PATIALA &
Published at Patiala for Prop. JAGPREET SINGH

वन पृथ्वी पर जीवन के लिए अनिवार्य हैं, जो जैव विविधता, जलवायु नियंत्रण और ऑक्सीजन का मुख्य स्रोत हैं। इनकी अंधाधुंध कटाई से उत्पन्न संकट को रोकने के लिए वैश्विक स्तर पर संरक्षण की आवश्यकता है।

पृथ्वी पर संतुलन बनाए रखने में मनुष्यों, जीव-जंतुओं और वनों का अहम योगदान है। वनों का कार्य न केवल जीव-जंतुओं का आवास और भोजन प्रदान करना है, बल्कि पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए भी वनों का होना अनिवार्य है।

पृथ्वी पर जीवन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन का मुख्य स्रोत वन हैं, जो वातावरण से कार्बन डाईऑक्साइड सोखकर उसे ऑक्सीजन में बदलते हैं। वन वर्षा, तापमान नियंत्रण, मृदा कटाव रोकने और जैव विविधता को संरक्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वनों की मजबूत जड़ें मिट्टी को बांधकर भारी बारिश में कटाव और बाढ़ का खतरा कम करती हैं। हालांकि, वनों की अंधाधुंध कटाई से जीव-जंतुओं के



आवास स्थान घट गए हैं और जैव विविधता पर खतरा मंडरा रहा है।

हर साल दुनिया भर में जंगलों में लगने वाली आग के कारण लाखों हेक्टेयर जंगल और जीव-जंतुओं की कई प्रजातियां नष्ट हो जाती हैं। वर्ष 2020 में ऑस्ट्रेलिया के जंगलों में लगी भीषण आग ने न केवल जैव विविधता को नुकसान पहुंचाया, बल्कि बड़ी संख्या में जंगल भी जलकर खाक हो गए।

संयुक्त राष्ट्र की एक

अंतर्राष्ट्रीय वन दिवस

सरकारी जवाबदेही व जनभागीदारी से संरक्षण

रिपोर्ट के अनुसार, पिछले तीन दशकों में विश्वभर में लगभग एक अरब एकड़ वन नष्ट हो चुके हैं। कुछ दशकों पहले तक पृथ्वी का लगभग 50 प्रतिशत भू-भाग

योगेश कुमार गोयल

पर वनों के महत्व के प्रति जागरूकता फैलाने, इनके संरक्षण में समाज का

वर्षा क्षेत्रों जैसे पश्चिमी घाट, अंडमान-निकोबार और पूर्वोत्तर भारत में पाए जाते हैं। इन वनों में वृक्ष एक-दूसरे से मिलकर सूर्य के प्रकाश को जमीन तक



वनों से आच्छादित था, लेकिन अब यह घटकर केवल 30 प्रतिशत रह गया है। पर्यावरण विशेषज्ञों के अनुसार, वनों की घटती संख्या का सीधा प्रभाव पृथ्वी पर मौजूद जैव विविधता पर पड़ेगा। वृक्षों और वनों का क्षेत्रफल घटने से जीव-जंतुओं के आवास पर संकट आ जाएगा और अनियमित मौसम के रूप में मानव जाति पर भी इसके गंभीर दुष्प्रभाव सामने आएंगे।

वनों की अंधाधुंध कटाई के कारण ग्लोबल वार्मिंग और प्राकृतिक

योगदान प्राप्त करने और पौधारोपण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष 21 मार्च को 'अंतर्राष्ट्रीय वन दिवस' मनाया जाता है।

वर्ष 2025 का विषय 'वन और खाद्य पदार्थ' है, जिसमें वनों की खाद्य सुरक्षा, पोषण और आजीविका में महत्वपूर्ण भूमिका को बढ़ाया जाएगा। वन केवल भोजन, ईंधन, आय और रोजगार प्रदान नहीं करते, वे मिट्टी की उर्वरता को भी बनाए रखते हैं, जल संसाधनों की रक्षा करते हैं, और जैव विविधता के लिए महत्वपूर्ण आवास भी प्रदान करते हैं, जिसमें परागणकों का भी योगदान है। इसके अलावा, वन वन-निर्भर समुदायों, विशेष रूप से स्वदेशी लोगों के जीवन के लिए आवश्यक हैं और वे जलवायु परिवर्तन के शमन में भी मदद करते हैं, क्योंकि वे कार्बन को संगृहीत करते हैं।

पृथ्वी का वह क्षेत्र, जहां वृक्षों का घनत्व अधिक होता है, वन कहलाता है। वनों के विभिन्न प्रकार होते हैं, जैसे सदाबहार वन, मैंग्रोव वन, शंकुधारी वन, उष्णकटिबंधीय वन, शीतोष्ण वन, पर्णपाती वन, बोरील वन और कांटेदार वन, जो विभिन्न जलवायु और पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार विभाजित होते हैं।

भारत में प्रमुख वन प्रकारों में सदाबहार वन, मैंग्रोव वन, शंकुधारी वन, पर्णपाती वन और शीतोष्ण कटिबंधीय वन शामिल हैं। सदाबहार वनों को वर्षा वन भी कहा जाता है, जो उच्च

नहीं पहुंचने देते। मैंग्रोव वनों का विकास डेल्टा क्षेत्रों और नदियों के किनारे लवणयुक्त जल में होता है।

पर्णपाती वन मध्यम वर्षा वाले क्षेत्रों में होते हैं, जहां वर्षा केवल कुछ महीनों के लिए होती है। मानसून के दौरान तेज बारिश और सूर्य के प्रकाश के कारण इन वनों में तेजी से वृद्धि होती है, और गर्मी व सर्दी के मौसम में वृक्षों की पत्तियां झड़ जाती हैं। नए पत्ते चौर माह में उगते हैं। कांटेदार वन जैसे खजूर, कैक्टस और नागफनी कम नमी वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं, जहां इनकी जड़ें गहरे तक समाई होती हैं और ये जल संरक्षण में मदद करते हैं। उष्णकटिबंधीय वन भूमध्य रेखा के पास होते हैं, जबकि शीतोष्ण वन मध्यम ऊंचाई वाले स्थानों पर और बोरील वन ध्रुवीय क्षेत्रों के निकट पाए जाते हैं।

इस संकट को देखते हुए, वर्ष 2021 के ग्लासगो जलवायु सम्मेलन में 100 से अधिक देशों ने वर्ष 2030 तक वनों की अंधाधुंध कटाई पर पूरी तरह पाबंदी लगाने का संकल्प लिया था। वनों की कटाई और प्रदूषण के बढ़ते स्तर के कारण कई ग्लेशियर लुप्त होने के कगार पर हैं और ग्लोबल वार्मिंग का खतरा लगातार बढ़ रहा है, जिससे मौसम में बड़े बदलाव हो रहे हैं। इस स्थिति को देखते हुए, पूरी दुनिया को एकजुट होकर वनों के संरक्षण और उनके विनाश को रोकने के लिए प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है।

आम के नाशीकीटों का प्रबंधन



आम (मेंजीफेरा इंडिका) को फलों का राजा कहा जाता है। भारत विश्व में आम का एक प्रमुख उत्पादक तथा निर्यातक देश है। आम के उत्पादन को अनेकों कारक प्रभावित करते हैं। इनमें नाशीकीटों का प्रमुख स्थान है, जोकि आम के उत्पादन में कमी लाते हैं, बल्कि उनकी गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल असर डालते हैं, जिससे हमारा निर्यात प्रभावित होता है। आम को प्रभावित करने वाले नाशीकीटों में फुदका, मिलीबग, तना बेधक, फल मक्खी, गुठली घुन आदि का प्रमुख स्थान है तथा आम के उत्पादन पर प्रतिकूल असर डालते हैं। प्रस्तुत लेख में आम के इन्हीं नाशीकीटों के विषय में जानकारी दी जा रही है, जोकि आम उत्पादक किसान भाईयों के लिए उपयोगी साबित होगा।

है। आम की गुठली घुन का वितरण सभी आम उत्पादक क्षेत्रों में कम या अधिक पाया जाता है।

आम के गुदे की घुन (स्टेनोचिटस फ्रिगीडस) : अंडों से निकालने के बाद ग्रब फलों के गुदे में सुरंग बनाना शुरू कर देते हैं तथा गुठली तक पहुंच जाते हैं। इसी के अंदर ये अपना जीवन काल पूरा करता है तथा पूर्ण विकसित होने पर ग्रब आम में छिद्र बना कर बाहर निकल जाते हैं। आम के फलों से ग्रब बाहर निकालने से पूर्व आम के फलों पर इस कीट के प्रकोप का कोई चिन्ह दिखाई भी नहीं देता है। आम के फलों पर इस कीट के निशान भी स्पष्ट दिखाई देते हैं, जिनमें फलों पर अंडे के छोटे-छोटे भूरे निशान तथा फलों पर वयस्क घुन के बाहर निकालने के गोल निशान भली-भांति देखे जा सकते हैं।

फल बेधक (डेंनोलिस एल्बीजोनेलिस) : अंडे से निकली सुंडियां

फूल झड़ने लगते हैं, जिससे फल बनना कम हो जाता है। रस चूसने के अतिरिक्त ये कीटमधु रस (हनीड्यू) का उत्सर्जन करती है, जोकि पत्तियों पर जमा हो जाती है। इसके कारण पत्तियों पर काली फफूंदी उग जाती है। इसके कारण प्रकाश संश्लेषण क्रिया में भी विघ्न उत्पन्न होता है। फलतः उत्पादन में भारी कमी आती है। मिलीबग का प्रकोप देश के सभी आम उत्पादक राज्यों में देखा जाता है।

शल्क कीट (ऐस्पीडिओटस) : इस कीट के वयस्क अंडाकार होते हैं तथा इनका शरीर पर गुलाबी मोमीय पदार्थ से ढका हुआ होता है। कीट की मादा अवस्था की तीनों अवस्थाओं तथा नर की दूसरी अवस्थाओं में दो पूंछनुमा मोमीय धागाकार लंबी संरचनाएं पाई जाती हैं। इस कीट के गुलाबी रंग के निंफ तथा वयस्क दोनों ही समूहों में चीकू की पत्तियों की निचली सतह पर, कोमल तनों, प्ररोह, कोमल शाखाओं,



आम की फल मक्खी (बेक्टोसिरा डोर्सोलिस, बैक्टोसिरा करकटा तथा बेक्टोसिरा जोनाटा) : फल मक्खी की मादाएं आधे अथवा पूर्ण पके फलों की बाहरी त्वचा पर अपने अंडरोपक की मदद से अंडे देती हैं। मादा 3 से 5 तक अंडे आम के फलों के मिजोकार्प में देती है। अंडों से निकलने के बाद मेगेट फलों को

कारण फल पेड़ों से असमय ही गिर जाते हैं। आम की फल मक्खी का प्रकोप देश के सभी आम उत्पादक स्थानों पर होता है।

गुठली घुन (स्टेनोचिटस मेंजीफेरी) : वयस्क गुठली घुन गठीला तथा गहरे भूरे रंग का होता है, जबकि इनके ग्रब सफेद रंग के, बिना पैर के मांसल होते हैं। अंडे से निकालने के बाद ये ग्रब आम के

आम के फलों में छिद्र करती हैं। पूर्ण विकसित सुंडियों के शरीर पर लाल-सफेद धारियां होती हैं। ये सुंडियां आम के निचले भाग से घुस कर गुठली को नुकसान करती हैं। आम में घुसने वाले छिद्र इस कीट के मल से भर जाता है। इसके कारण आम के फलों में सड़न उत्पन्न हो जाती है तथा इस प्रकार के फल असमय ही गिर जाते हैं। इस कीट का प्रकोप अधिकतर दक्षिण के राज्यों जैसे आंध्र प्रदेश, तेलंगाना तथा उड़ीसा में देखा जाता है।

थ्रिप्स (सिटोथ्रिप्स डोर्सोलिस) : इस कीट के शिशु तथा वयस्क दोनों ही नई पत्तियों पर अपने मुखांग रगड़ कर उनसे निकलने वाले रस को चाटते हैं। ये कीट पत्तियों के शीर्ष के आस-पास से मिजोफिल से रस चूसते हैं। थ्रिप्स से प्रभावित पत्तियों का रंग सफेद या सिल्वरी रंग का हो जाता है तथा उन पर इस कीट के मल के छोटे-छोटे टुकड़े दिखाई देते हैं। इस कीट का वितरण देश के सभी आम उत्पादक राज्यों में देखा जाता है।

मिलीबग (ट्रांसीका मेंजीफेरी) : इस कीट के वयस्कों का शरीर सफेद मोमी पाऊंडर से ढका होता है। ये कीट समूहों में आम के कोमल तनों, प्ररोह, कोमल शाखाओं तथा पुष्पक्रमों पर बड़ी संख्या में पाई जाती है। पुष्पक्रमों पर इस कीट के प्रकोप कारण

फलों के डंठल के पास तथा फलों पर रह कर उनसे लगातार रस चूसते हैं, जिससे पौधों के ओज में कमी आने लगती है। पत्तियों का रंग हल्का हो जाता है, साथ ही साथ वे गिर जाती हैं। फलों का आकार छोटा रह जाता है और उनका वजन हल्का रह जाता है। रस चूसने के अतिरिक्त ये कीट मधु रस (हनीड्यू) का उत्सर्जन करती है, जोकि पत्तियों पर जमा हो जाती है। इसके कारण पत्तियों पर काली फफूंदी उग जाती है। इसके कारण प्रकाश संश्लेषण क्रिया में भी विघ्न उत्पन्न होता है। फलतः उत्पादन में भारी कमी आती है। मिलीबग का प्रकोप देश के सभी चीकू उत्पादक स्थानों पर देखा जा सकता है।

प्ररोह बेधक (चुलुमेटिया ट्रान्सवर्सा) : इस कीट की सुंडियां नई प्ररोह में नीचे की ओर सुरंग बनाने लगती हैं, जिससे नई पत्तियां गिर जाती हैं तथा आम के छोटे पौधे सूखने लगते हैं। इसके अतिरिक्त ये कीट आम के पुष्पक्रम में भी घुस कर उनको भारी नुकसान करते हैं। वयस्क मादा कीट कोमल पत्तियों पर अंडे देती है। इस कीट का विस्तार भारत के सभी आम उत्पादक स्थानों पर होता है।

फुदका (एमरिटोडस एटकिनसोनी) : इस कीट के शिशु (निम्फ) तथा वयस्क नावाकार होते हैं। ये आम की कोमल पत्तियों, प्ररोह आदि से लगातार रस चूसते रहते हैं, जिससे पौधों का डोज (विगर) कम हो जाता है। इसके कारण आम के पुष्पक्रमों को भारी नुकसान होता है तथा छोटे-छोटे पुष्प तथा फल असमय ही गिर जाते हैं। इस कीट द्वारा लगातार रस चूसने के कारण पत्तियां टेढ़ी-मेढ़ी और विकृत हो जाती हैं तथा कीट ग्रसित पत्तियां सूख

शेष पृष्ठ 6 पर

आम के नाशीकीटों के नियंत्रण हेतु अनुशंसित रासायनिक कीटनाशी				
कीटनाशक	मात्रा			प्रतीक्षा अवधि (दिन)
	सक्रिय तत्व (a.i.) ग्राम	नुस्खा (Formulation) (ग्राम या मि.ली.)	घोल की मात्रा (5 से 15) (पेड़/लीटर)	
फुदका				
बुप्रोफेजीन 25% एस.सी.	0.025 से 0.05%	1 से 2 मि.ली./लीटर पानी	5-15 लीटर/पेड़	20
डेल्टामेथ्रीन 2.8 ई.सी.	0.03 से 0.05%	0.33 से 0.5 मि.ली./लीटर पानी	-	1
इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल.	0.4 से 0.8 मि.ली./पेड़	2 से 4 मिलीलीटर/पेड़	10 लीटर	45
लेम्डा सायहेलोथ्रीन 5% ई.सी.	0.0025 से 0.005%	0.5 से 1.0 मि.ली./लीटर पानी	-	7
थायोमिथोक्ज़ोम 25% डब्ल्यू.जी.	25	100	1000	30
मिलीबग				
मोनोक्रोटोफॉस 36% एस.एल.	0.04%	1500 से 2000	500 से 2000 लीटर पानी (20 लीटर पानी/पेड़)	-
मैलाथियान 50% ई.सी.	0.075%	2250 से 3000	1500 से 2000 लीटर पानी	-
स्त्रोत : agricoop.nic.in या ppqs.gov.in				

अंदर ही अंदर खाना शुरू कर देती है। अंडों से निकलने के बाद मेगेट फलों को अंदर ही अंदर खाना शुरू कर देती है। इनसे फलों में अन्य सूक्ष्म जीवों के प्रकोप से सड़न उत्पन्न होने लगती है। इसके

गुदे में सुरंग बना कर गुठली को नुकसान करके अन्दर घुस कर बीजपत्रों को खाकर नुकसान करने लगता है। गुठली घुन का प्रकोप प्रमुख रूप से नीलम, तोतापुरी, बेगलुरा तथा बेगमपल्ली किस्मों पर अधिक होता

चने की फसल में कीट एवं रोग प्रबंधन

आर.एस. चौहान, अश्वनी कुमार एवं नरेन्द्र सिंह, कृषि विज्ञान केन्द्र, पंचकूला, चौ.च.सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

दलहनी फसलों में चने का अपना एक प्रमुख स्थान है। हरियाणा में चना मुख्यतः हिसार, भिवानी और महेन्द्रगढ़ जिलों में उगाया जाता है। यद्यपि चने की पैदावार काफी कम है लेकिन इसमें प्रोटीन की मात्रा 17-25 प्रतिशत तक होती है तथा जनमानस के लिए प्रोटीन का एक सर्वोत्तम स्रोत है। किसी भी फसल की पैदावार को कम करने में कीड़ों व बीमारियों की मुख्य भूमिका होती है। यदि किसानों को कीड़ों व बीमारियों के नुकसान की प्रवृत्ति व लक्षणों की सही जानकारी हो तो समय पर प्रबंधन के कदम उठाकर फसल उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

कीटों की रोकथाम

1. कटुआ सूण्डी: इस कीट की सूण्डी उगते हुए पौधों को तने के बीच से अथवा बढ़ते हुए पौधों की शाखाओं को काटकर नुकसान पहुंचाती है।

रोकथाम: इस कीट की रोकथाम के लिए 80 मिलीलीटर फेनवलरेट 20 ई.सी. या 50 मिलीलीटर साइपरमैथरीन 25 ई.सी. या 150 मिलीलीटर डैकामैथरिन 2.8 ई.सी. को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें या 0.4 प्रतिशत फेनवलरेट पाउडर 10 किलोग्राम एकड़ धुईं।

फली छेदक सूण्डी: यह चने की फसल का सबसे नुकसानदायक कीट है। इस कीट की सूण्डी प्रायः हरे रंग की होती है जो पत्तों, कलियों व फलियों (टांट) पर आक्रमण करती है तथा फलियों में बन रहे दानों को खा कर नष्ट कर देती है।

रोकथाम: इस कीट की रोकथाम के लिये 200 मिलीलीटर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 80 मिलीलीटर फेनवलरेट 20 ई.सी. या 125 मिलीलीटर साइपरमैथरीन 10 ई.सी. या 150 मिलीलीटर डैकामैथरिन 2.8 ई.सी. या नोवालुरान (रिमोन) 10 ई.सी. 150-200 मिलीलीटर या 400 ग्राम

कार्बोरिल 50 डबलयू.पी. को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें तथा 15 दिन बाद दोहराएं।

बीमारियों की रोकथाम:

1. उखेड़ा: यह रोग प्रायः रेतीली मिट्टी व शुष्क क्षेत्रों में अधिक होती है। बिजाई के लगभग 3-6 सप्ताह



बाद रोगग्रस्त पौधों की पत्तियां मुरझाकर लुढ़क जाती हैं परन्तु उनमें हरापन बना रहता है। तने को चाकू से लम्बाई में काटने पर अन्दर से इस वाहिकी काली या भदे रंग की दिखाई देती है।

रोकथाम: हालांकि उखेड़ा रोग के लक्षण लवणता, भूमि में कम नमी तथा दीमक के आक्रमण द्वारा भी हो सकते हैं। इसलिए उपचार से पहले इन कारणों की जांच करना अति आवश्यक है। उखेड़ा रोग की रोकथाम के लिये भूमि में नमी बनाए रखें तथा 10 अक्टूबर से पहले बिजाई न करें। उखेड़ा रोग रोधी किस्में एच 208, चना नं. 1, चना नं. 3, व हरियाणा चना नं. 5 की बिजाई न करें। बीज को बाविस्टीन 25 ग्राम प्रति कि.ग्रा. या जैविक फफूंदनाशक टाइकोडरमा विरिडी 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. विट्रावैक्स 1 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज का रस उपचारित करें।

2. तना गलन: पत्तियां बदरंग हुए बिना गिर जाती हैं। भूमि की सतह पर सफेद फफूंद तने को चारों ओर से घेर लेता है तथा बाद में पिण्ड से दिखाई पड़ते हैं। हालांकि ग्रसित पौधों की रस वाहिकी में कोई

भद्दापन नहीं दिखाई देता। अधिक वर्षा और फसल की अधिक बढ़वार की दशा में इस रोग के आने की अधिक सम्भावना होती है।

3. जल गलन: इस रोग का प्रकोप फसल की अंकुरण अवस्था में या सिंचित क्षेत्रों में जब फसल बड़ी होती है, तब होता है। भूमि की सतह के पास पौधे के तने पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। ग्रसित पौधों के तने व पत्तियां हल्के पीले रंग के हो जाते हैं। जड़ गल जाने के कारण पौधा खींचने पर जमीन में ही रह जाता है।

4. ऐसकोकाइट झुलसा रोग: इस बीमारी से पत्तों, तनों व फलियों पर हल्के भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं जिनकी परिधि में हरे भूरे रंग के दायरे दिखाई देते हैं। बाद में ये धब्बे लम्बे हो जाते हैं तथा इन पर काली धारियां काले बिन्दु के समान दिखाई देते हैं। पौधे का ग्रसित भाग जकड़ जाता है तथा धीरे-धीरे रोग सारे खेत में फैल जाता है।

5. आल्टरनेरिया झलसा रोग: पत्तों पर धीरे-धीरे, गोल भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। रोग बढ़ने पर ये धब्बे हल्के पीले रंग में बदल जाते हैं परिणाम स्वरूप पौधे गिर कर सूख जाते हैं।

6. ग्रे-मोल्ड: शुरु में पत्तियां भूरे रंग में बदलने लग जाती हैं ऊपर की टहनी थोड़ी झुक जाती है जिन में फफूंद दिखाई देती है। रोग ग्रस्त टहनियां तथा तने बाद में सड़ने लगते हैं।

रोकथाम:

1. जिन खेतों में झुलसा रोग का आक्रमण रहा हो, उनमें चने की फसल न लें।

2. चने की हरियाणा चना नं. 3, सी-235 या गौरव किस्में उगाएं क्योंकि ये किस्में झुलसा रोग के प्रति प्रतिरोधी हैं।

3. साफ व रोगमुक्त बीज की बिजाई करें तथा बीजगत संक्रमण से बचाव के लिए बैविस्टीन (2.5 ग्राम 1 किलो बीज) से बीज उपचार करें।

4. रोगग्रस्त पौधों तथा अवशेषों को जलाकर नष्ट कर दें।

शेष पृष्ठ 5 की

आम के नाशीकीटों का प्रबंधन

जाती है। इस कीट अर्थात् फुदका का विस्तार भारत के सभी आम उत्पादक स्थानों पर होता है।

आम के कीट सर्वेक्षण (पेस्ट सर्वेलेन्स) : आम की फसल की शुरुआत होते ही नाशीकीटों का सर्वेक्षण कार्य शुरू कर देना चाहिए। ये सर्वेक्षण साप्ताहिक अंतराल पर करना चाहिए। इस हेतु आम के बाग में इधर-उधर घूम कर प्रति एकड़ 20 पेड़ों से

पर लगातार नज़र रखनी चाहिए।

आम में नाशीकीट

प्रबंधन उपाय :

1. आम की फसल पूरी होने के तुरंत बाद बाग की गहरी जुताई करनी चाहिए, इससे ज़मीन में पड़ी फल मक्खी, आम की मिलीबग की अपरिपक्व अवस्थाओं का नाश हो जाता है तथा कीटों के प्रकोप में कमी आती है।

2. फुदके की रोकथाम हेतु



300 फलों को चुन कर उनका निरीक्षण करना चाहिए, जिससे फल मक्खी, बेधक तथा घुनों की स्थिति का वास्तविक ज्ञान हो सके। मिलीबग के सर्वेक्षण हेतु प्रति पैड 10 शाखाओं को चुन कर उन पर मिलीबग की संख्या को ज्ञात किया जा सकता है। इसी प्रकार से पर्ण जालक कीट के प्रकोप हेतु आम के पैड की चारों दिशाओं में जालों की उपस्थिति को ध्यान में लेकर उनकी उपस्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। इसी प्रकार से पत्ती खाने वाले तथा बेधकों के लिए प्रत्येक पेड़ की 15 से 20 शाखाओं या प्ररोह पर उनकी संख्या पर नज़र रखनी चाहिए। आम में फल मक्खी के नियंत्रण हेतु फल आने की शुरुआत के साथ ही मिथाईल यूजीनोल ट्रेप लगा कर फल मक्खी

आम के पेड़ों के बीच सही दूरी रखनी चाहिए। सघन रोपण से बचना चाहिए तथा एक-दूसरे के ऊपर तथा छू रही टहनियों को भी हटा देना चाहिए।

3. आम के बागों की अक्टूबर माह में गहरी सिंचाई करनी चाहिए।

4. आम के घुन से ग्रसित सड़े-गले फलों को एकत्रित कर उनका नाश करना चाहिए।

5. आम की मिलीबग की प्रथम अवस्था निंफ को पेड़ों पर चढ़ने से रोकने हेतु 400 गेज़ पोलीथीन को तने के चारों तरफ लपेटना चाहिए तथा इस पर चिपचिपा ग्रीस या तेल लगाने से ये निंफ (क्रोल्स) ऊपर नहीं चढ़ सकेंगे।

6. फल मक्खी के प्रकोप को कम करने हेतु फलों को सही समय पर तोड़ लेना बहुत ज़रूरी है।

7. लघु स्तर पर फलों पर थैली बांधने से फल मक्खी के प्रकोप में कमी की जा सकती है।

8. पर्ण सुरंघक के प्रकोप में कमी करने हेतु कीट द्वारा बनाए गए जालों को काट कर उनको जला देना चाहिए। इससे पर्ण सुरंघक के प्रकोप में कमी लाई जा सकती है।

9. अनेक प्रकार के जैविक नियंत्रण कारक (प्राकृतिक शत्रु) आम के विभिन्न नाशीकीटों की संख्या को कम करने में अपनी भूमिका अदा करते हैं। अतः उनका संरक्षण और संवर्धन करना बहुत ही आवश्यक है।

10. आम के बाग में अनेक प्रकार के परजीव्याभ तथा परभक्षी सक्रिय होते हैं, जोकि नाशीकीटों की संख्या को नियंत्रित करने में मदद भी करते हैं। इनमें परभक्षी रेडोलिया फ्यूमिडा, सुमिनस रिनार्डी, कोक्सिनेलीड भूंग, मेलेडा बोनीएन्सिस, परजीव्याभ प्लेटिगेस्टर युप्लुमस, सिस्टेसिस डेसन्यूरी, रोगकारक फफूंदी जैसे बेवेरिया बेसियाना, वर्टिसिलीयम लेकानी आदि प्रमुख हैं।

शेष पृष्ठ 2 की

करनाल बंट – गेहूं का कोढ़

नियंत्रण : करनाल बंट निवारण हेतु समेकित व्याधि प्रबंधन (IDM - Integrated Disease Management) करना चाहिए, ना कि व्याधि नियंत्रण। व्याधि नियंत्रण में रोग का नाश केवल रसायन द्वारा किया जाता है, जबकि समेकित व्याधि प्रबंधन में बीमारी को रोकने की समग्र कार्यवाही करनी चाहिए। समेकित व्याधि प्रबंधन करने हेतु निम्नलिखित कदम उठाने चाहिए :

(1) अनुवांशिक उपाय : दीर्घकालिक उपाय के तौर पर गेहूं की ऐसी किस्में विकसित करें, जो करनाल बंट रहित हों। करनाल बंट ग्राह्य किस्में आदि की कृषक बुवाई ना करें।

(2) दशा परिवर्तन : बीज तथा उर्वरक की कम मात्रा, पानी देने के समय में देरी में परिवर्तन कर इस रोग से बचा जा सकता है, परन्तु इन सब का सीधा प्रभाव कृषक की उपज पर पड़ता है, जो कृषक सहन नहीं कर सकता।

(3) फसल-चक्र : भूमि में रोग के कवक-फंजाई को रोकने के लिए फसल-चक्र अपनाना

चाहिए तथा भूमि को गर्मी में गहरी जुताई करके या अन्य तरीकों से रोग रहित करना।

(4) मल्लिचंग : मल्लिचंग द्वारा भूमि का तापमान बढ़ा कर कवक



को बुवाई से पहले ही नष्ट कर देना चाहिए।

(5) बीज का मूवमेन्ट : यद्यपि भारत में यह उपाय अभी लागू नहीं है, परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रभावित जिलों अरिजोना कैलीफोर्निया टेक्सास

से गेहूं का बाहर जाना निषेध है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में बंट प्रभावित बीज उत्पादकों एवं कृषकों को क्षति हरजाना देते हैं।

(6) आयुर्वेदिक उपचार :

कैनेविस सटार्ईवा (भांग) यूकेलिपटस ग्लोबुलस (यूकेलिप्टस), थुजा साइनेन्सिस (मोर पंखी) तथा धतुरा स्टेमोनियम (धतूरा) के रसों के छिड़काव इस रोग के नियंत्रण में प्रभावशाली है।

(7) रासायनिक उपचार :

(क) प्रोपीकोनाज़ोल : इस रसायन के 25 प्रतिशत ई.सी. के घोल द्वारा इस रोग का 94.4 प्रतिशत नियंत्रण होता है, परन्तु तीन छिड़काव द्वारा 100 प्रतिशत नियंत्रित किया जा सकता है। यह रसायन सिन्जैटा इंडिया (टिल्ट 25 ई.सी.), नागार्जुना (रिजल्ट) तथा गोदरेज (कन्ट्रोल) के नाम से उपलब्ध है। इसके 200 ग्राम 150 लीटर पानी के घोल का छिड़काव बाल निकलते समय करें। बाल निकलने पर काफी देरी करने पर छिड़काव से लाभ नहीं होता। यह ओरबिट (Orbit), क्विल्ट (Quilt) के रूप में भी उपलब्ध होता है।

(ख) कार्बांडाजिम : कार्बांडाजिम 200 ग्राम 150 लीटर पानी में स्प्रे करने से इस रोग का 84 प्रतिशत नियंत्रण होता है। 2 ग्राम प्रति किलो की दर से कार्बांडाजिम द्वारा उपचार करने से भी रोग नियंत्रित होता है।

(ग) मैन्कोजेब : 0.2 प्रतिशत मैकोजेब (डाइथेन एम-45) के स्प्रे से भी नियंत्रित किया जाता है।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली, सिंचाई की अति आधुनिक सिंचाई प्रणाली है। इस विधि में पौधों में सिंचाई जल का धीमा किन्तु ससत् प्रयोग करते हुए इसे पौधों की जड़ों में ड्रिपर या एमिटर की सहायता से सुगमतापूर्वक पहुंचाया जा सकता है। इस प्रकार सिंचाई जल का गहराई में प्रवेश, मृदा जल वाष्पीकरण तथा बहाव जैसे कारणों से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है। इस विधि द्वारा पानी की बचत होती है, क्योंकि पानी पौधे की जड़ों में ही दिया जाता है तथा खेत के अन्य भाग सूखे रह जाते हैं। इस विधि द्वारा सिंचाई के पानी का शत-प्रतिशत उपयोग किया जाता है। इस प्रकार इस विधि द्वारा 80-90 प्रतिशत तक पानी की बचत की जा सकती है। जिसके द्वारा 1.5-2 गुणा अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध करवाई जा सकती है। सिंचाई की इस विधि को टपक सिंचाई/बूंद सिंचाई/स्प्रिंकल सिंचाई या माईक्रो इरीगेशन सिस्टम भी कहते हैं। यह विधि बागबानी और सब्जी उत्पादन के लिए अधिक उपयुक्त है।



ड्रिप सिंचाई प्रणाली

ड्रिप सिंचाई प्रणाली का उपयोग :- ड्रिप सिंचाई प्रणाली का उपयोग की कमी वाले क्षेत्रों, शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों, ऊबड़-खाबड़ एवं पहाड़ी क्षेत्रों में बागवानी की फसलों जैसे-अंगूर, आनार, नींबू, केला, अमरूद, लीची, आम तथा सेब आदि में किया जाता है। इस विधि का उपयोग कतार में उगाई जाने वाली सब्जियों तथा गन्ना, कपास आदि नकदी फसलों में किया जाता है। इस प्रणाली का प्रयोग ग्रीन हाऊस में फूल और सब्जी पैदा करने के लिए भी हो रहा है।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली की बनावट एवं कार्य विधि :- सिंचाई की इस प्रणाली में एक डीजल इंजन (या विद्युत मोटर), एक सीलड सेंट्रीफ्यूगल पंप, डिलीवरी पाईप, बाईपास वाल्व, प्रेशर गेज, सैड फिल्टर, मुख्य लाईन लेटरल लाईन, एमिटर या ड्रिप्स लगे रहते हैं। डीजल इंजन तथा पंप कुएं में से पानी उठाने के काम आते हैं। सेंट्रीफ्यूगल पंप से पानी डिलीवरी पाईप में, डिलीवरी पाईप से मेन लाईन में, मेन लाईन से लेटरल लाईन में, लेटरल लाईन से एमिटर या ड्रिपर ओरिफिस में और अंत में ड्रिपर से होता हुआ पौधे की जड़ में पहुंचता है।

पाईप-लाईन के मध्य में पानी को रोकने तथा शुरू करने के लिए बाईपास वाल्व, पानी का दबाव नापने के लिए प्रेशर गेज, पानी को छानने के लिए सैड फिल्टर, पानी को बाहर निकालने के लिए तथा पाईप के सफाई के लिए वाल्व लगे रहते हैं। फसल में आवश्यकता अनुसार खाद तथा दवाई देने के लिए खाद का एक टैंक पानी की मेन लाईन के समांतर लगा होता है। एक एमिटर

लाईन पी.वी.सी. पाईप की बनी होती है तथा लेटरल पाईप लाईन एवं माईक्रो ट्यूब (पतली नलिकाएं) घनत्व वाली पोलिथीन (एच.डी.पी.ई.) की बनी होती है।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली का अभिकल्प (डिजाइन) :- ड्रिप सिंचाई प्रणाली की अकल्पना के अंतर्गत मुख्यतः निम्नलिखित का उचित चयन किया जाता है:

डॉ. रविन्द्र सिंह राणा, प्रमुख वैज्ञानिक (कृषि अभियांत्रिकी), चौ. स. कृ. हि. प्र. कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर

1. मुख्य लाईन तथा लेटरल लाईनों का व्यास एवं लंबाई।
2. सिंचाई समय एवं पंपिंग सैट का चयन।

3. ड्रिप की प्रति पौधा संख्या एवं निस्सर्ण (डिस्चार्ज) दर।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली में पंप द्वारा पानी को स्रोत से उठाकर मेन (मुख्य) तथा लेटरल (शाखा) लाईनों में उचित दबाव पर भोजा जाता है, जो कि ड्रिपरों में से होते हुए बूंद-बूंद करके पौधों की जड़ों के पास गिरता है। इस प्रणाली में मेन लाईन मुख्यतः पौधों की पंक्तियों के लम्बवत् बिछाई जाती है। मुख्यतः मेन लाईन का व्यास 2.5-7.5 सेंटीमीटर होता है। मेन लाईन के ऊपर तथा निचले सिरों में दबाव का अंतर 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए।

ड्रिप लेटरल लाईन पौधों की पंक्तियों के साथ-साथ बिछाई जाती है। लेटरल लाईन 12 मिलीमीटर तथा 16 मिलीमीटर के व्यास में उपलब्ध होती है, किन्तु अधिकतर 16 मिलीमीटर व्यास की लेटरल लाईन का ही प्रयोग किया जाता है। लेटरल लाईनों में

(धरातलीय सिंचाई विधि) की अपेक्षा 30-80 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है। इसके अतिरिक्त जल से 1.5-2 गुणा क्षेत्रफल को सींचा जा सकता है। इस पद्धति में पानी का नुकसान न के बराबर होता है, क्योंकि इसमें रिसाव, अपवाह एवं वाष्पीकरण द्वारा जल का नुकसान नहीं होता है।

2. इस पद्धति द्वारा पौधों की जड़ों में

आवश्यकतानुसार पानी पूर्व निर्धारित दर पर दिया जाता है। परिणामतः पौधों की अच्छी वृद्धि होती है और पैदावार में 20-70 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इस पद्धति के तहत उत्पन्न फसल की गुणवत्ता भी अति उत्तम होती है।

3. इस प्रणाली द्वारा पानी की पूर्व निर्धारित दर, भूमि की संरचना, पौधों व फसलों के प्रकार, पौधों के बीच का अंतर, तापमान, जलवायु तथा पानी आदि को ध्यान में रखकर क्षेत्र विशेष में प्रदान की जा सकती है।

4. इस विधि द्वारा ऊबड़-खाबड़ भूमि में सिंचाई आसानी से की जा सकती है, क्योंकि इसमें भूमि समतलीकरण की आवश्यकता नहीं होती है, जिससे भूमि समतल एवं भूमि विकास पर होने वाले खर्च को कम किया जा सकता है।

5. रेतीली भूमि में फसलों की सिंचाई के लिए अत्यधिक उत्तम विधि है, क्योंकि इसमें अन्य सिंचाई विधियों की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है।

6. यह प्रणाली उन क्षेत्रों के लिए लाभदायक है, जिन इलाकों में सिंचाई की लागत अधिक पड़ती है। इस प्रणाली में बहाव सिंचाई की तुलना में मजदूरों की आवश्यकता काफी कम होती है।

7. इस विधि द्वारा सिंचाई करने पर घास तथा खरपतवार कम आते हैं, क्योंकि पानी केवल पौधों की जड़ में ही दिया जाता है। अन्य स्थानों पर सिंचाई का पानी नहीं पहुंच पाता है। अतः खरपतवार नियंत्रण सुगमतापूर्वक किया जा सकता है। इस विधि द्वारा सिंचित भूमि में निराई-गुड़ाई में आने वाली लागत विभिन्न बहाव सिंचाई विधियों की अपेक्षा 50 प्रतिशत तक कम होती है।

8. ड्रिप सिंचाई प्रणाली द्वारा महंगे रासायनिक उर्वरक व अन्य रसायनों का प्रयोग पौधों की जड़ों में वांछित गहराई तक किया जा सकता है। परंपरागत विधि की तुलना में ड्रिप द्वारा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करने पर 50 प्रतिशत तक की बचत होती है।

9. इस विधि में कम ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए इस विधि के प्रयोग से डीजल/विद्युत की 60 प्रतिशत तक बचत की जा सकती है, जोकि आज के युग की आवश्यकता है।

10. सिंचाई के लिए नालियां एवं मेड इत्यादि बनाने की जरूरत नहीं होती है, जिससे कि अधिक भूमि कृषि कार्यों के लिए उपलब्ध हो जाती है।

11. ग्रीन हाऊस में ड्रिप सिंचाई का उपयोग सुगमतापूर्वक किया जा सकता है।

12. इस विधि द्वारा लगभग 60 प्रतिशत ढालू भूमि पर भी सिंचाई की जा सकती है जिसके परिणामस्वरूप पहाड़ी क्षेत्रों में फल एवं सब्जियां आसानी से उगाई जा सकती हैं।

13. इस प्रणाली से शुल्क क्षेत्रों में भी खारे पानी का उपयोग उचित ढंग से किया जा सकता है, क्योंकि इस पद्धति से पानी में घुले लवण पौधे के सक्रिय मूल क्षेत्र से नीचे चले जाते हैं व फसलों को नुकसान नहीं पहुंचाते हैं। जबकि धरातलीय सिंचाई प्रणाली से खारे पानी का प्रयोग करने पर लवण सतह में ऊपर रह जाते हैं, जिससे उपज कम होती है।

14. पौधों में सिंचाई जल का धीमा किन्तु सतत् प्रयोग किया जा सकता है। अपेक्षाकृत बड़े क्षेत्र की सिंचाई एक ही समय में तथा समरूपता से की जा सकती है, जबकि बहाव विधि में ऐसा संभव नहीं है।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली की देखभाल

1. भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा प्रमाणित ड्रिप सिंचाई प्रणाली के उपकरणों एवं पंप सैट मोटर का ही प्रयोग करना चाहिए। प्रमाणित गुणवत्ता के आधार पर ड्रिप सिंचाई प्रणाली लंबे समय तक बिना किसी रूकावट के अच्छी सेवायें प्रदान करती रहेगी।

2. यदि पानी में सिल्ट एवं रेत कण अधिक हों तो जालीदार फिल्टर के साथ-साथ सैड फिल्टर का प्रयोग भी अवश्य करें।

3. समय-समय पर फिल्टरों की सफाई एवं धुलाई अवश्य करें।

4. मेन लाईन तथा सभी लेटरल लाईनों को साल में कम से कम 2 बार साफ करें।

5. योजनाबद्ध तरीके से समय-समय पर संपूर्ण खेत का निरीक्षण करें तथा बंद पड़े हुए ड्रिपरों को खोलते रहें ताकि सभी पौधों को पर्याप्त मात्रा में पानी मिल सके।

6. बंद पड़े हुए ड्रिपरों को खोलने के लिए आवश्यकता अनुसार रासायनिक जल से उपचार करें।

समस्याएं एवं सुझाव :

1. यह पद्धति बहुत महंगी है, जिससे साधारण किसान इसे अपना नहीं सकता। इसके लिए राज्य एवं केन्द्र सरकार ने कुछ अनुदान राशि शुरू की है, जोकि प्रत्येक स्थान पर मिलनी चाहिए। इसके साथ ही वित्तीय संस्थानों द्वारा किसानों को ऋणों सुविधा भी उपलब्ध करवानी चाहिए।

2. किसानों में इस प्रणाली के बारे में तकनीकी जानकारी का अभाव है, जिसे किसान गोष्ठियों एवं विशेष प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध करवाकर दूर किया जा सकता है।

3. समय पर स्थानीय बाजारों में अतिरिक्त पुर्जों का अनुदान मूल्य पर उपलब्ध न होना। निजी कंपनियों को चाहिए कि वे अतिरिक्त पुर्जे एवं संतोषजनक सेवा बिक्री उपरांत समय पर उपलब्ध करवाएं।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली स्थापना हेतु अनुदान :-

विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा इस पद्धति को बढ़ावा देने के लिए किसानों को लाभ पहुंचाने के लिए अनुदान (सब्सिडी) की भी व्यवस्था की गई है। यह स्कीम कृषि/उद्यान विभाग से संबंधित है। अतः अनुदान से अधिक जानकारी के लिए जिले के कृषि/उद्यान (बागबानी) अधिक कार्यालय से जानकारी प्राप्त की जा सकती है।



प्रतिदिन 2-10 लीटर पानी पौधे को देता है। जिससे पौधे की प्रतिदिन की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है। एमिटर को ढीला करने से या कसने से पानी की मात्रा घटाई या बढ़ाई जा सकती है। वैसे तो इस प्रणाली के सभी भाग महत्वपूर्ण हैं, किन्तु एमिटर (ड्रिपर) अति महत्वपूर्ण तथा सिस्टम का हृदय कहलाता है। आजकल सब्जियों के लिए एक विशेष प्रकार का सुधरा हुआ ड्रिप-इन-ड्रिप सिस्टम आ गया है, जिसमें ड्रिपर या एमिटर नहीं लगे होते हैं और इनकी जगह लेटरल लाईन में ही उचित दूरी पर विशेष प्रकार के छिद्र होते हैं, जिससे पानी बूंद-बूंद कर के पौधे के पास गिरता है।

सिंचाई की यह पद्धति एकदम सरल है। इस विधि में डिलीवरी पाईप लाईन जी. आई. पाईप की बनी होती है। मुख्य पाईन

पानी का दबाव ड्रिपर के आधार पर 0.2 से 1.75 किलोग्राम प्रति वर्ग सें.मी. तक हो सकता है। मुख्यतः लेटरल की लंबाई खेत की सीमा और पौधों की पंक्तियों की लंबाई पर निर्भर करती है। लेटरल लाईन के ऊपर तथा निचले सिरों में दबाव का अंतर 20 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। लेटरल लाईनों को मेन लाईन के साथ एडाप्टर द्वारा जोड़ा जाता है।

ड्रिपर, लेटरल लाईनों पर पौधों के पास-पास चारों ओर लगाए जाते हैं। ड्रिपरों से पानी निस्सर्ण की दर 2-14 लीटर प्रति घंटा हो सकती है। लेटरल की लंबाई में लगे ड्रिपरों की निस्सर्ण दर का अंतर 20 प्रतिशत से कम होना चाहिए।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली के लाभ :-

1. इस विधि के द्वारा सामान्य सिंचाई विधियों

हिसार में दो दिवसीय कृषि मेले में किसानों ने 10 किलो का शलगम, कद्दू और 7 फीट की लौकी दिखाकर लोगों को हैरान कर डाला

हिसार जिले के चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में दो दिवसीय कृषि मेले में हरियाणा, राजस्थान, पंजाब, हिमाचल, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश सहित विभिन्न राज्यों के करीब 83,000 से अधिक किसानों ने हिस्सा लिया।

किसानों ने लगाया अलग-अलग स्टॉल : किसान मेले में किसानों ने अलग-अलग स्टॉल लगा रखी थी। इन स्टॉलों में किसानों की मेहनत साफ तौर पर देखने को मिली। स्टॉल में दस किलो की शलगम, सबसे बड़ी प्याज, दस किलो का कद्दू, आठ फीट की पालक, सात फीट की लौकी, गन्ने के जूस की कुल्फी आकर्षण का केंद्र बनी रही। किसान मेले का उद्घाटन कुलपति प्रो. बी.आर. काम्बोज ने किया। इस दौरान जागरूक किसानों को सम्मानित किया गया। डॉ. नरेंद्र के अनुसार कृषि



10 किलो की शलगम



10 किलो की लौकी

रतिया के किसान बीरेंद्र ने प्याज की उन्नत बीज निकाली है। इस प्याज के बीज की खासियत है कि इससे प्याज का साइज बड़ा होता है। इस प्याज का वजन 200 से

7 फीट की लौकी : गंगानगर गांव के किसान कृष्ण स्वामी ने बताया कि वो देसी बीज को लेकर खेती कर रहे हैं। वे अपने खेत में लौकी के देसी बीज तैयार

अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ कर सकते हैं। कृषि क्षेत्र में मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन, वर्मी कम्पोस्टिंग, सब्जी उत्पादन, बागवानी, चारा उत्पादन, साइलेज मेकिंग, नर्सरी, बीज उत्पादन, मछली पालन और बेकरी में प्रशिक्षण लेकर युवा किसान स्वरोजगार स्थापित कर रहे हैं।

हिसार कृषि मेले में गन्ने की कुल्फी : पैकिंग और ब्रांडिंग पर किसान दे रहे ध्यानरू प्रो. बी.आर. काम्बोज ने आगे कहा, अधिक मुनाफा कमाने के लिए किसानों को उन्नत खेती के तरीके अपनाने के साथ-साथ उत्पाद का प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन करने के अलावा सर्विसिंग, पैकिंग और ब्रांडिंग पर भी ध्यान देना चाहिए। विश्वविद्यालय में स्थापित एग्री-बिजनेस इन्क्यूबेशन सेंटर विद्यार्थियों, उद्यमियों, किसानों और महिलाओं को कृषि संबंधी नए आइडिया पर स्टार्टअप के लिए 4 से 25 लाख रुपए तक का अनुदान देता है।

मिट्टी और पानी के 372 नमूनों की जांच की गई : विस्तार शिक्षा निदेशक डॉ. बलवान सिंह मंडल ने कहा, मेले में किसानों ने करीब 43.06 लाख रुपये के खरीफ फसलों और सब्जियों की उन्नत किस्मों के प्रमाणित बीज और करीब 3 लाख 50 हजार रुपये के फलदार पौधे और सब्जियों के बीज खरीदे। बीज के अलावा किसानों ने 12580 रुपये के जैव उर्वरक और 45 हजार रुपये का कृषि साहित्य भी खरीदा। कृषि मेले में मिट्टी और पानी जांच सेवा का लाभ उठाते हुए मिट्टी और पानी के 372 नमूनों की जांच करवाई गई।



10 किलो का कद्दू

मेले में वैरायटियों को लेकर भी प्रतियोगिता करवाई गई थी। प्रतियोगिता में अब्बल आने वाले किसानों को सम्मानित किया गया।

आठ फीट की पालक : चमार खेड़ा के किसान बीरेंद्र आठ फीट की पालक लेकर मेले में पहुंचे थे। उन्होंने देसी वैरायटी से बड़ी मेहनत करके इसे तैयार किया था।

दस किलो का कद्दू : हिसार के किसान मैनपाल ने देसी लौकी और दस किलो का कद्दू तैयार किया है। किसान ने बताया कि ये लौकी और कद्दू खाने में काफी स्वादिष्ट है। देसी कद्दू को ऑर्गेनिक तरीके से उगाया जा रहा है और इसका टेस्ट काफी ज्यादा स्वादिष्ट है।

सबसे बड़े प्याज की खेती : वही,



हिसार कृषि मेले में सबसे बड़ा प्याज

250 ग्राम होता है। साथ ही ये प्याज खाने में मीठा होता है। इस प्याज के बीज को अन्य किसानों को भी उपलब्ध कराए जा रहे हैं।

10 किलो शलगम : मात्रश्याम गांव के किसान ऋषि पाल ने अनोखी शलगम की खेती की है। इस शलगम का वजन दस किलो है। किसान ऋषि पाल ने बताया कि बड़े शलगम से बीज तैयार करते हैं।

करते हैं। उनकी लौकी की लंबाई छह से सात फीट तक चली जाती है।

युवा किसान कर रहे स्वरोजगार स्थापित : किसान मेले को लेकर कुलपति प्रो. बी.आर. काम्बोज ने कहा कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में कृषि उद्यमिता कारगर सिद्ध हो सकती है। कृषि क्षेत्र में युवाओं के लिए उद्यमिता की अपार संभावनाएं हैं। किसान खेती बाड़ी के साथ-साथ कृषि उद्यमिता को अपनाकर

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें

कृषि संसार

साप्ताहिक कृषि समाचार पत्र

किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए

चंदों में विशेष छूट

एक वर्ष 500/- रुपए

दो वर्ष 800/- रुपए

खेती दुनिया (पब्लिकेशनज़)
के.डी. कॉम्प्लैक्स, गरुशाला रोड, पटियाला

KHETI DUNIYA
TID - 62763351



चंद भेजने हेतु QR कोड स्कैन करें।

पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :



90410-14575